'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ३३ | वाराणसी, गुरुवार, १९ मार्च, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

आशीर्वचन

२६-२-'५९

गृहस्थाश्रम ब्रह्मचर्य की साधना में बाधक नहीं, साधक है !

[ता० २६ फरवरी को हट्टुंडी में श्री विष्णु भाई की बैंगलोर-निवासी सुफला बहन के साथ, मीरा व्यास की श्री अरुण भाई के साथ शादी हुई। मीरा बहन का विनोबाजी के साथ काफी गहरा सम्पर्क है। उस अवसर पर विनोबाजी आशीर्वाद दें, यह अपेक्षा होनी स्वाभाविक ही थी। विनोबाजी ने पद-यात्रा के बीच में सब कार्यकर्ताओं के साथ बैठकर इस प्रसंग से आये अपने विचारों को व्यक्त किया। उसी भाषण को शादी के अवसर पर पढ़ा गया था। भाषण में तीन शादियों का उल्लेख है, किन्तु कुछ कारणों से दो ही शादियाँ हो सकी थीं।—सं०]

आज टीले पर चढ़ने को मिलेगा, ऐसा नहीं सोचा था, लेकिन चलते-चलते जब रास्ते में टीला आया तो उसने हमारे दिल को खींच लिया। हमको हमेशा गौतम बुद्ध का वचन याद आता है कि 'सत्पुरुष समस्त लोगों को उसी तरह देखता है, जिस तरह किसी पहाड़ पर अवस्थित मनुष्य नीचे के खेतों में काम करनेवालों को देखता रहता है। ऊपरवाले को समग्र दर्शन होता है, दूर-दर्शन होता है, तटस्थ दर्शन होता है। नीचे रहने से समग्र दर्शन नहीं हो सकता। नीचे रहकर मनुष्य व्यवहार में फँसा हुआ रहता है। लेकिन वही मनुष्य जब ऊपर खुली हवा में आता है तो निर्लिप्तता का अनुभव करता है। इस तरह समग्र, दूर, निर्लिप्त दर्शन ही सच्चा दर्शन है। एकांगी, संकुचित और आसक्त दर्शन दर्शन ही नहीं है।' बचपन से लेकर आज तक जहाँ भी हम टीला देखते हैं, वहाँ मन ऊपर चढ़ने का हो जाता है। नीचे रहकर ऊपर ताकते रहना हमें बिलकुल नापसंद है।

आज तीन शादियाँ होने जा रही हैं। पहली शादी नाना सेठ के लड़के की है, जो खानदेश में अकराणी महाल में काम करते हैं, दूसरी शादी एक जवान लड़के (विष्णु भाई) की है, जो सर्व-सेवा-संघ में काम करता है और वर्षों से सर्वोदय-विचार में पला है। वे दोनों अभी यहाँ मौजूद नहीं हैं। तीसरी शादी मीरा की अरुण के साथ होने जा रही है। मीरा से मेरा तीन साल का परिचय है। मेरे साथ वह यात्रा में रही है। उसमें काम करने की लगन है। उसमें अब धीरे-धीरे समझ भी आ रही है। अरुण भी भूदान के काम में लगा है, भक्त-हृदय है, सन्तों के भजनों में मस्त रहता है। गुजरात-यात्रा में अरुण का भी परिचय मुझसे हो गया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ये दोनों अपने जीवन को मंगल बनायेंगे और मन, वचन, शरीर से अपने आपको नारायण की सेवा में लगायेंगे।

गृहस्थाश्रम और ब्रह्मचर्य

अभी हमने दो श्लोक गाये। वे श्लोक मुझे बचपन ही से बहुत प्रिय हैं। ध्यान के समय उन श्लोकों का मैं हमेशा उपयोग करता हूँ। उनमें परमात्म-दर्शन के साधन बताये गये हैं। सत्य, ब्रह्मचर्य आदि साधन हैं। सत्य को छोड़कर कोई भी गुण नहीं हो सकता, इसीलिए सत्य का उल्लेख प्रथम किया गया है। अगर ठीक ढंग से सोचें तो गृहस्थाश्रम भी ब्रह्मचर्य के लिए ही है। शास्त्रकारों के बताने के अनुसार ही अगर वर्तन किया जाय तो गृहस्थाश्रम भी ब्रह्मचर्य की साधना का एक प्रकार हो जाता है। खैर, जीवन बड़ा विचित्र है। जो पहुँच गये हैं, उनके लिए वह एक सीधी लकीर है, पहुँचे नहीं हैं, उनके लिए वह एक टेढ़ी लकीर है। उनको टेढ़े रास्ते जाना पड़ता है।

जवान लड़के-लड़कियाँ, खास करके लड़कियाँ ब्रह्मविद्या के दर्शन के लिए आगे आयें, ऐसी मेरी इच्छा है। ब्रह्मविद्या में स्त्री-पुरुष का भेद ही नहीं है। वह विद्या स्त्री-पुरुषों के भेद को मिटाती है। फिर भी अभी मैं इस काम के लिए बहनों की ओर आशा लगाये बैठा हूँ। क्योंकि इससे पूर्व भाइयों के लिए मैं प्रयत्न कर चुका हूँ, इसलिए अभी हमारे समाज के उत्थान के लिए ऐसी महिलाएँ बहुत जरूरी हैं, जिनका जीवन ही ब्रह्म-विद्यामय बन जाय। यह काम मुझे अपने इस युग की आवश्यकता ही प्रतीत होती है।

इधर तो मैं यह कह रहा हूँ और उधर विवाह को आशीर्वाद दे रहा हूँ। यह आपको विचित्र-सा दीखता है, लेकिन सचमुच यह विचित्र है नहीं। अनेक जन्मों के हम प्रवासी हैं, हमारा विकास चल रहा है, हम सब एक ही मार्ग से जा रहे हैं, सर्वोदय, भूदान, ग्रामदान का मार्ग तो स्वीकार कर ही लिया है, लेकिन उसके साथ-साथ हमने आत्म-दर्शन का मार्ग भी स्वीकार किया है। उसमें कोई एकाध कदम आगे है तो कोई एकाध कदम पीछे है। रास्ते में चलते हुए ऐसा होता ही है। सब साथ-साथ चलते हैं, फिर भी कहीं-न-कहीं एकाध

कदम तो आगे-पीछे रहते ही हैं। आगे-पीछे रहने पर भी सभी साथ ही रहते हैं।

इन दिनों मीरा की ब्रह्मविद्या-मन्दिर में प्रविष्ट होने की बात चल रही थी। वह भी इसकी तैयारी में लगी थी। इसी बीच परमेश्वर की योजना जो थी, वह प्रकट हो गयी। याने शादी हो रही है। लेकिन अगर मैं शादी के कार्य को ब्रह्मविद्या-मन्दिर के प्रवेश में निषिद्ध मानता तो मैं इसका निषेध ही करता या निषेध न भी करता तो कम-से-कम आशीर्वाद तो देता ही नहीं। जिनसे अपने जीवन में सम्बन्ध आता है, उनसे कुछ अपेक्षाएँ रखी जाती हैं। वे अपेक्षाएँ पूरी न होने से साधारण मनुष्य के लिए कुछ दुःख होने की सम्भावनाएँ रहती हैं, किंतु मुझे दुःख नहीं हुआ। क्योंकि मैंने यह माना है कि यह मार्ग भी उसको उसी तरफ ले जायगा। अगर भगवान दोनों के अन्तर में प्रेरणा देंगे तो थोड़ा घूम करके ही सही, लेकिन ये स्थान पर पहुँच जायँगे। अतः यह चीज विरोधी नहीं है।

कार्यकर्ताओं का विवाह

भूदान में काम करनेवाले कार्यकर्ताओं की शादी देखकर कुछ लोगों को बड़ा विचित्र-सा लगता है। कुछ लोगों को तो मानो भाई-बहन की शादी हो रही है, ऐसा लगता है। परन्तु ऐसा लगना ठीक नहीं है। अगर एक धर्मवालों की शादी न हो तो क्या अलग धर्म माननेवालों के साथ शादी की जाय? धर्म का अर्थ हिन्दू, मुसलमान, क्रिस्ती नहीं है। धर्म याने कर्तव्य है। जो अपना कर्तव्य ही अलग समझते हैं, उनका क्या सम्बन्ध होगा? इसीलिए मैं इसको दोषपूर्ण नहीं, बल्कि ठीक समझता हूँ। यह बात ठीक ही है कि कभी-कभी ऐसे मामलों में कुछ छिपाने की भी कोशिश होती है, उससे सत्य में बाधा आती है, परन्तु वैसा इसमें नहीं हुआ है।

खैर, अभी यह सहज ही प्रसंग आया, इसलिए मैं बोल गया हूँ। शाम को मंगल विवाह होगा, उसके बाद आशीर्वाद के तौर पर ज्यादा बोलूँगा नहीं। अभी दो शादीवाले अनुपस्थित हैं, लेकिन यही उनके लिए भी माना जायगा।

एक प्रश्न!

कल होशियारी बहन ने एक बड़ा सुन्दर और विलक्षण प्रश्न पूछा है कि 'हम भागवत में सुनते हैं कि कृष्ण की संगति में जो गोपियाँ रहीं, वे मुक्त हो गयीं तो गांधीजी और आपकी संगति में जो लड़कियाँ रहती हैं, उनको सांसारिक वासना क्यों होती है?'

बापू महात्मा थे, मैं तो एक साधारण साधक हूँ। उससे ज्यादा कुछ बनना भी नहीं चाहता। लेकिन यह बात सही है कि बापू को ब्रह्मचर्य का अनुभव अपने ढंग से था और मुझे उसका अनुभव अपने ही ढंग से है। दोनों को ब्रह्मचर्य के लिए बहुत आदर रहा है। वे भी सत्य को प्रधान स्थान देते थे और मैं भी उसी गुण को प्रधान स्थान देता हूँ। मैं मानता हूँ कि जो कुछ सत्यनिष्ठा का अंश हमारे जीवन में उतरा होगा, उसका असर पास रहनेवालों पर जरूर होगा। परन्तु भगवान कृष्ण कहाँ और हम कहाँ? भागवत में गाया है कि 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयं,' इसीलिए परमेश्वर के साथ किसी की तुलना करना योग्य नहीं है। ऐसी तुलनाएँ लोग अपने मन में करते हैं, परन्तु मैं नहीं करता। बापू की तुलना ईसामसीह से की गयी है, लेकिन मैं उसको पसन्द नहीं करता। ईसामसीह अपने ढंग से अद्वितीय थे। करोड़ों भक्त उनके नाम से तर गये हैं। ऐसा ही स्थान भारत में भगवान कृष्ण का है। इधर रामजी का भी नाम चलता है। इन दिनों गौतम बुद्ध का भी नाम चलने लगा है। ये तीनों नाम परमेश्वर के हैं। सत्य, प्रेम और करुणा के रूप में उनका स्मरण हम प्रतिदिन करते हैं। इसलिए इन तीनों में भी किसीकी तुलना किसीके साथ नहीं हो सकती। हमने तीनों को भगवान रूप में ही देखा है। कृष्ण परमेश्वर का एक रूप ही हो गये हैं। कृष्ण के नाम से हिन्दुस्तान में असंख्य लोगों का उद्धार हुआ। मेरा भी हो जायगा। शंकर, रामानुज, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य, चैतन्य, ज्ञानदेव, तुकाराम, नरसी मेहता और मीराबाई-कितने नाम लिये जायँ? वे सब कृष्ण के नाम में लीन हो गये। इसलिए परमेश्वर का हमने जो रूप सोचा, उसके साथ किसी भी मानव की तुलना करना शोभनीय नहीं है। इस मामले में इस्लाम का विचार बहुत अच्छा है। हम लोगों में यानी हिन्दुओं में और क्रिस्तियों में महापुरुषों के नाम भगवान के नाम के साथ जोड़े जाते हैं। उसमें भी रुचि है। 'यत्र योगेश्वरः कृष्णः यत्र पार्थो धनुर्धरः' ऐसा गीता में कहा गया है। धनुर्धर पार्थ की क्या जरूरत थी? कृष्ण अकेले काफी थे, फिर भी कृष्ण के साथ अर्जुन का नाम जोड़ दिया। भक्त को प्रधानता दी गयी है। जहाँ भक्त और भगवान दोनों होते हैं, वहीं विजय होती है, ऐसा कहा गया है। परन्तु इस्लाम में बहुत स्पष्ट कहा गया है कि अल्लाह के साथ किसीका भी नाम जुड़ना नहीं चाहिए। अल्लाह के सिवाय दूसरा कोई पूजनीय नहीं हो सकता है। "ला इलाह इल्-इल् लाह। मुहमद रसूल उल्लाह।" मुहम्मद केवल पैगंबर है, वह खुदा का संदेश देनेवाला सेवक है, वह अल्लाह का स्थान नहीं ले सकता।

होशियारी बहन का यह प्रश्न मुझे बहुत अच्छा लगा है। इसका उत्तर कब दूँगा, यह सवाल ही था। आज सहज उसका मौका मिल जाने से कुछ स्पष्ट कर दिया है। ●●●

राष्ट्र-भाषा-सम्मेलन में, कुमार साहित्य-परिषद्वालों के साथ

पर्वतसर (राज०) ६-३-'५९

उदारता का प्रतिनिधित्व करनेवाली सहज और सरल भाषा हिन्दी है!

राष्ट्रभाषा वह होगी, जिसे समस्त राष्ट्र सहज प्रेम से स्वीकार करेगा। राष्ट्रभाषा लादी नहीं जा सकती। कोई भी भाषा कितनी भी समर्थ हो, मधुर हो, आकर्षक हो, लेकिन उसे जब तक समस्त राष्ट्र स्वीकार नहीं करता, तब तक वह राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती। कभी-कभी किसी भाषा को अधिक गुण न रहने के बावजूद लोग प्रेम से उठा लें तो वह राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन हो सकती है।

हिन्दी के लिए अधिक-से-अधिक लोगों ने सम्मति दी है। इसलिए नहीं कि वह सब भाषाओं से अधिक सम्पन्न है, बल्कि इसलिए कि वह अधिक सहन कर सकती है। बँगला-साहित्य हिन्दी से अधिक समर्थ है, तमिल-साहित्य भी बहुत सम्पन्न है। उसकी तुलना में हिन्दी का साहित्य नहीं टिकेगा। हिन्दी में सूरदास, तुलसी, दादू, नानक, विद्यापति, मीरा, नामदेव, रैदास, धर्मदास आदि की भाषा कम सम्पन्न नहीं है, किन्तु तमिलभाषा

में जो दो हजार साल का पुराना साहित्य पड़ा है, उसकी बराबरी शायद हिन्दी नहीं कर सकेगी। तेलगू, मलयालम एवं मराठी-वाले हिन्दी की बराबरी का दावा कर सकते हैं, लेकिन हिन्दी अन्य भाषाओं की बराबरी का दावा नहीं करती और न सम्पन्नता का अभिमान ही रखती है।

हिन्दी की उदारता

पूना में मराठी में व्याख्यान देते समय यदि कोई व्याकरण की दृष्टि से गलती हो जाय तो सम्भव है कि तत्काल तालियाँ बजेंगी। मराठी भाषा व्याकरण के दोष सहन नहीं करती, लेकिन हिन्दी में वैसी बात नहीं है। हिन्दीवाले व्याकरण की गलतियाँ सहन कर लेते हैं। मेरे भाषण में यदि कहीं गलती हो जाय तो हिन्दीवाले कहते हैं कि यह 'विनोबा की शैली है।' हिन्दीवाले गलती ही सहन नहीं करते, बल्कि इनाम भी देते हैं। हिन्दी का प्रचार करने के उपलक्ष में मुझे इनाम दिया गया है। जैसे समुद्र किसी नदी को यह नहीं कहता है कि स्वच्छ जल होगा, तभी तुम्हें प्रवेश मिलेगा, अस्वच्छ जल होने से प्रवेश नहीं मिलेगा, वैसे ही हिन्दीवाले सबको अपने में समा लेते हैं।

'अच्छी मौसम' या 'अच्छा मौसम' यह मेरी समझ में नहीं आता। इसलिए कभी मैं 'अच्छी मौसम' कहता हूँ और कभी 'अच्छा मौसम'। फिर भी सुननेवाले ठीक-ठीक समझ लेते हैं। गुजराती में 'अच्छी मौसम' कहा जाता है और हिन्दी में अच्छा मौसम। इसी प्रकार गुजराती में 'अच्छी असर' कहा जाता है और हिन्दी में 'अच्छा असर'। लेकिन मैं दोनों का उपयोग करता हूँ और हिन्दी-वाले उसे यथावत् समझ लेते हैं, यह कितनी बड़ी बात है! हिन्दी में लिंग-भेद का बहुत ज्यादा आग्रह नहीं है।

मैं हिन्दुस्तान की कई भाषाएँ जानता हूँ। जो व्यक्ति पन्द्रह-बीस भाषा जानता है, सम्भव है, वह परिशुद्ध रूप से कोई भी भाषा नहीं जानता होगा। उसकी वाक्य-रचना में कई भाषाएँ अभिव्यक्त होती हैं। मैं हिन्दी बोलता हूँ तो उसमें मराठी आती है, गुजराती आती है और संस्कृत भी आती है। किसी भाषा में बोलते समय जब कोई शब्द नहीं सूझता है, तब मैं संस्कृत शब्द का प्रयोग करता हूँ। संस्कृत शब्द आने से कोई उसकी शिकायत नहीं करता। भाषण में संस्कृत-प्रधान वाक्य-रचना होने से अज्ञान तो छिपता ही है और ऊपर से मैं विद्वान् साबित होता हूँ। मेरी भाषा में जिस तरह संस्कृत, मराठी, गुजराती आदि शब्द आते हैं, उसी तरह मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में तमिल, तेलगू, कन्नड़, मलयालम के शब्द भी आने चाहिए। किन्तु ऐसा नहीं होता है, क्योंकि उन भाषाओं के शब्द इन भाषाओं में बैठते नहीं हैं और इन भाषाओं की छानबीन करने-वाले उन भाषाओं के शब्दों को महत्त्व नहीं देते। हिन्दी व्यापक है। इसमें सभी भाषाओं के शब्द खपते हैं, इसलिए यह भाषा राष्ट्रभाषा बनी है।

हिन्दी की सम्पन्नता में दूसरों का योग

प्राचीन सभ्यता का प्रचार काशी में हुआ था। सारे देश-वालों की काशी पर इतनी श्रद्धा थी कि भारत का कोई भी संत काशी गये बिना नहीं रहता था। काशी जायँ तो कौन-सी भाषा में बोलें? तब हिन्दी बोलते थे और उसमें अपनी भाषा के शब्दों को डालते थे। लिंगभेद होता था, वह सह्य मान लिया जाता था। इस तरह यात्रियों ने हिन्दी चलायी और आरो आकर उसने सहज ही राष्ट्र का रूप ले लिया।

हिन्दी को सम्पन्न बनाने में दूसरी भाषावालों ने बहुत परिश्रम किया है। उनमें नामदेव का नाम मुख्य रूप से लिया जा सकता है। नामदेव पंजाब में गये थे। वहाँ वे हिन्दी में भजन करते थे। गुरु ग्रंथ साहब में उनके नाम का उल्लेख है। नामदेव के हिन्दी भजनों को पढ़ते समय उनमें मराठी का असर देखता हूँ। उस समय मुझे तत्काल मालूम हो जाता है कि कौन-से शब्द मराठी हैं। उनके हिन्दी भजनों में विठ्ठल नाम आता है। महाराष्ट्र में श्रीकृष्ण का नाम विट्ठल है। नामदेव ने विट्ठल नाम को ही पंजाब में चलाया और वह वहाँ मान्य हुआ। इस प्रकार हिन्दी को व्यापक बनाने में अनेकों महापुरुषों का महत्त्वपूर्ण योग रहा है।

हिन्दी का स्वरूप कैसा हो?

उत्तर प्रदेशवाले व्याकरण का बहुत आग्रह रखते हैं। मैं उनसे कहता हूँ कि वैसा आग्रह रखने से आप लोग गुजराती, मराठी भाषावालों की श्रेणी में आ जाओगे! व्याकरण का आग्रह रखोगे तो गंगा बनोगे और आग्रह-मुक्त होकर चलोगे तो समुद्र बनोगे! समुद्र बनना है या गंगा, यह तो आपको तय करना होगा। गंगा बनना चाहते हो तो व्याकरण शुद्ध रहेगा। गंगा शुद्ध और पवित्र रह सकती है, किन्तु उसमें नर्मदा, गोदावरी, आदि नदियाँ दाखिल नहीं होंगी, फिर नर्मदा नर्मदा ही रहेगी, गोदावरी गोदावरी ही रहेगी तथा गंगा गंगा ही रहेगी और यदि समुद्र बनना चाहते हो तो पानी खारा बनेगा। फिर तो हिन्दी में मराठी, गुजराती, तमिल आदि सभी भाषाएँ मिलेंगी। गंगाजल बनने से केवल प्रान्तीय भाषाएँ रहेंगी। आप प्रान्तीय बनेंगे। अगर आप प्रान्तीय और राष्ट्रीय दोनों बनना चाहते हैं तो आपको समुद्र बनना होगा।

हिन्दी को राष्ट्रभाषा के तौर पर स्वीकार किया गया है, इसलिए हिन्दी अब दो प्रकार की होगी। एक तो साहित्यिकों की और दूसरी सेवकों की। साहित्यिकों की हिन्दी गंगा जैसी पवित्र होगी और हम जैसे सेवकों की हिन्दी होगी समुद्र जैसी व्यापक। सेवकों की हिन्दी से हिन्दी की लज्जत नहीं बढ़ेगी, इज्जत बढ़ेगी। आप लज्जत पसन्द करते हैं या इज्जत? लज्जत चाहिए तो प्रान्तीय बनो और इज्जत चाहिए तो राष्ट्रीय बनो।

कुछ लोगों को लगता है कि दक्षिण भारतवाले हिन्दी के खिलाफ हैं, लेकिन सच तो यह है कि वे हिन्दी के खिलाफ नहीं, किन्तु जबर्दस्ती हिन्दी लादी जाने के खिलाफ हैं। तमिलनाड़ में अभी हिन्दी का अध्ययन खूब चल रहा है। ऐसी परिस्थिति में अगर उनपर हिन्दी लादी जाय तो ठीक नहीं लगता। लादने की आवश्यकता ही क्या है?

भाषा सीखने का क्रम

हर नागरिक को दो भाषाएँ आनी चाहिए। मातृभाषा और राष्ट्रभाषा। जैसे दो आँखों से ज्ञान मिलता है, वैसे ही दो भाषाएँ सीखने से ज्ञान बढ़ेगा। दोनों मिलकर सम्यक्-दर्शन होगा। शंकर भगवान के तीन नेत्र थे। उनका तीसरा नेत्र ज्ञाननेत्र था। हमारे सभी देशवासियों को अच्छी संस्कृत आनी चाहिए। संस्कृतज्ञ होते ही वह तीन नेत्रवाला हो जायगा। भगवान शंकर की कोटि में आ जायगा। जिसे अंग्रेजी आती है, वह चार आँखोंवाला हो गया याने उसे चश्मा मिल गया।

भाषा हिन्दी, लिपि नागरी

हिन्दी का जितना महत्त्व है, उससे अधिक महत्त्व नागरी

लिपि का है। हिन्दुस्तान की कुल भाषाएँ नागरी लिपि में लिखी जा सकती हैं। नागरी लिपि में लिखे जाने से सभी भाषाओं का आसानी से घर बैठे अभ्यास हो सकता है। एक अपनी लिपि का गीता-प्रवचन और दूसरा देवनागरी लिपि का पंजाबी गीता-प्रवचन लेकर एक दिन में जितना अध्ययन आप पंजाबी भाषा का कर सकते हैं, उतना दो-तीन महीनों में भी आप नहीं कर सकते। नागरी लिपि के कारण नयी लिपि सीखने में आँखों को तकलीफ नहीं होती। पंजाबी की तरह ही गुजराती, कन्नड़, उड़िया आदि विभिन्न भाषाओं के गीता-प्रवचन उन-उन लिपियों के साथ-साथ नागरी लिपि में भी छपे हैं। एक भाषा के दो गीता-प्रवचन लेकर आप घर बैठे उस भाषा को आसानी से सीख सकते हैं। इस तरह सीखने से सभी भाषाओं में प्रवेश हो सकता है।

दो सुझाव

प्रश्न:—अश्लील साहित्य की ओर आकृष्ट होनेवाले आज के युवकों को हम कैसे रोक सकते हैं?

विनोबा—उनको रोकने की कोई आवश्यकता नहीं है। अच्छा साहित्य तैयार कीजिये, धार्मिक साहित्य को सामने आने दीजिये, फिर वह युवकों की रुचि को बदल देगा। अभी सस्ता साहित्य बढ़ाना चाहिए। इसके लिए गीता-प्रेस को धन्यवाद देना चाहिए। उस प्रेस ने हिन्दी की बहुत बड़ी सेवा की है। उसके कारण अश्लील साहित्य की ओर से लोगों की रुचि मुड़ी है।

हमें अश्लील साहित्य का विरोध करने के बजाय सत्-साहित्य घर-घर पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिए। भूदान-आन्दोलन प्रारंभ हुआ, तबसे अब तक मैं सहजभाव से गीता-प्रवचन पर हस्ताक्षर देता हूँ। गीता-प्रवचन की लगभग आठ लाख प्रतियाँ लोगों के पास पहुँची हैं। मुझे विश्वास है कि जिन्होंने गीता-प्रवचन लिया है, वे अश्लील साहित्य नहीं पढ़ेंगे।

मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। वह यह कि सिनेमा पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। केसकर कहता है कि मैं सिनेमाओं पर प्रतिबन्ध लगाने में असमर्थ हूँ। इस काम के लिए सारी व्यवस्था ही बदलनी होगी। इसपर मेरा कहना है कि चाहे जैसे भी हो, इस अवांछनीय प्रक्रिया को तत्काल रोकना ही चाहिए। अश्लील साहित्य से जितना अनर्थ नहीं होता, उतना सिनेमा से होता है। क्योंकि उसको आँखें देखती हैं, देखने से निर्मल भाव नहीं आता, दूषित भाव आता है। ● ● ●

स्त्री-सम्मेलन के बीच

सर्वोदयनगर (अजमेर) २८-२-'५९

लोक-सेवक-संघ का सपना साकार करने की जिम्मेवारी महिलाओं पर

इन वर्षों में महिलाओं के सम्बन्ध में बोलने का कई बार अवसर आया है। महिलाओं को लक्ष करके प्रगट किये गये मेरे विचारों को सर्व-सेवा-संघ ने एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया है। उस पुस्तक का नाम है 'स्त्री-शक्ति'। हिन्दुस्तान के प्रत्येक स्त्री-पुरुष के हाथों में वह पुस्तक पहुँचेगी, ऐसा मुझे विश्वास है। फिर भी आप मेरे सम्मुख उपस्थित हैं, इसलिए इस समय भी अपने कुछ विचार आपके समक्ष प्रस्तुत करूँगा।

कांग्रेस का अभिनन्दन

कांग्रेस ने एक तरुण महिला को अपना अध्यक्ष चुना, इसके लिए प्रारम्भ में मैं उसका अभिनन्दन करता हूँ। यह पहला अवसर नहीं है, जब कि कांग्रेस ने महिला को अपना अध्यक्ष चुना है। स्वराज्य-प्राप्ति से पूर्व कांग्रेस की अध्यक्षा स्त्रियाँ रह चुकी हैं, लेकिन स्वराज्य के बाद तो यह पहला ही मौका है। स्वराज्य के पहले और स्वराज्य के बाद के कामों में बहुत अन्तर होता है। स्वराज्य के पहले के कामों का रूप लगभग निगेटिव, अभावात्मक होता है, इसलिए उस समय स्त्री या पुरुष किसीके भी अध्यक्ष बनने से कोई मौलिक फर्क नहीं पड़ता। परन्तु स्वराज्य के बाद निर्माण का काम करना होता है, जिसमें बहुत कुछ रचनात्मक काम होते हैं, उनको करने का मौका कांग्रेस ने एक स्त्री को दिया, इसकी प्रसन्नता है।

हिन्दुस्तान की महिलाओं के पिता, भाई पति, पुत्र आदि भिन्न-भिन्न दलों में हैं, वे आपस में लड़ते हैं। उस लड़ाई से अलग कर उन्हें निर्माण के काम में लगाया जाय, इसके लिए महिलाएँ बहुत काम कर सकती हैं। मैं आशा करता हूँ कि उस दिशा में अग्रसर होने के लिए इस मौके का उपयोग किया जायगा। इंदिराजी ने सभी पक्षोंवाले भाई-बहनों को सहकार्य और सहयोग के लिए आवाहन भी किया है। हम सर्वोदयवाले सदा सहयोग करना चाहते हैं, इसलिए हमारा सहकार अवश्य मिलेगा। परंतु अब बहनों की ताकत बनाने के लिए कोशिश करनी होगी।

स्त्रियों का महत्त्वपूर्ण इतिहास

हमारे यहाँकी सभ्यता में स्त्रियों का स्थान पुरुषों से भी ऊँचा रहा है। बुद्धि, शक्ति, भक्ति, श्रुति, धृति, स्मृति, कीर्ति आदि सभी महत्त्वपूर्ण शब्द स्त्रीलिङ्गी हैं। 'कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा' इस तरह भगवान ने भी गीता में गाया है और कहा है कि स्त्रियों में स्त्री हूँ। मनु महाराज ने तो शास्त्रों में और भी विशेष बात लिख दी है। वह यह कि 'दस उपाध्यायों से एक आचार्य श्रेष्ठ है और सौ आचार्यों से एक पिता श्रेष्ठ है और हजार पिताओं से एक माता श्रेष्ठ है।' माताओं का गौरव हजारों पिताओं से भी श्रेष्ठ है। यह भारतीय सभ्यता का निर्देश है। यहाँ स्त्रियों की हमेशा प्रतिष्ठा रही है। हिन्दुस्तान के इतिहास में पुरुषों ने अनेकों गलतियाँ की हैं, लेकिन स्त्रियों ने नहीं कीं। एक मानव के नाते किसी-किसी स्त्री से गलती हुई हो तो दूसरी बात है, अन्यथा यहाँ हमेशा स्त्रियों ने पुरुषों को गलत काम करने से रोका है। रावण राक्षस रहा, लेकिन मन्दोदरी सती मानी गयी। वाली और तारा के बारे में भी यही कहा जा सकता है। रामायण और महाभारत में ऐसी कितनी ही मिसालें हैं, जिनमें स्त्रियों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर पूरा प्रकाश पड़ता है।

स्त्रियों को अपने जीवन में मुख्य दो काम करने होते हैं। एक तो सहधर्माचरण याने पुरुषों के काम में योग देना। राम के साथ सीता का वन में जाना ही उसका सहधर्माचरण है। दूसरा काम है—पुरुषों के कामों की पूर्ति करना। दुनियाभर में देखा गया है कि जो काम करना पुरुषों के

लिए कठिन होता है, वह काम स्त्रियाँ अच्छी तरह से कर सकती हैं। विशिष्ट कामों को करने के लिए पुरुषों को विशेष साधना की आवश्यकता होती है। परन्तु वात्सल्य, करुणा आदि गुणों के कारण स्त्रियाँ उन्हें आसानी से कर सकती हैं। पुरुषों को वैसे काम करने के लिए अपने में स्वतन्त्र गुण विकसित करने होते हैं। कुछ ही महापुरुष ऐसे हुए हैं, जो अपने परम पुरुषार्थ से दैवी गुणों में स्त्रियों से अधिक विकास कर सके। ईसा-मसीह के मार्दव के सामने स्त्रियाँ भी फीकी पड़ती हैं! इस युग में बापू भी वैसे ही हुए! पुराने युग में कृष्ण हुए, जिनके स्मरणमात्र से स्त्रियाँ मुक्त हुई हैं। लेकिन ऐसे पुरुष कितने होते हैं? विशेष पराक्रम से पुरुषों को जो गुण साधने पड़ते हैं, वे स्त्रियों में प्रकृतिगत होते हैं। इसलिए स्त्री-शक्ति बहुत काम कर सकती है।

इन दो कामों के अलावा अब तीसरे काम की जिम्मेवारी भी स्त्रियों पर आयी है, वह यह कि वे पुरुषों द्वारा बिगाड़े हुए काम सुधारें। पुरुषों के हाथ में दुनियाभर भी व्यवस्था होने से दो-दो महायुद्ध हो गये। अब वे समत्व के नाम पर स्त्रियों को भी सेना में भर्ती करने लगे हैं। यूरोप में स्त्रियों की पलटनें बनी हैं। अब वहाँ स्त्रियाँ भी बन्दूकें लेकर 'लेफ्ट-राइट, लेफ्ट-राइट' करती हैं। इन दिनों पुरुषों ने दुनियाभर में जो पार्टी-पॉलिटिक्स शुरू कर दिया है, वह कितना दोषपूर्ण है? हर जगह छेद-ही-छेद, टुकड़े-ही-टुकड़े हो रहे हैं। अब इन टुकड़ों को जोड़ने का काम स्त्रियों को करना है। पहले तो कपड़ा फटे ही नहीं तथा फट ही जाय तो उसे सी देने का काम स्त्रियों को करना है।

यह घूँघट क्यों?

कई स्थानों में हमने बहनों को घूँघट निकालते हुए देखा है। बाबा के दर्शन करने के लिए आती हैं, तब भी उनकी आँखों पर परदा रहता है। इधर मुझसे ठंड सहन नहीं होती, इसलिए मैं कानों को लपेट लेता हूँ। कानों को लपेटने के कारण मेरा भी घूँघट बन जाता है। फिर उनका तो घूँघट रहता ही है। तब वे क्या दर्शन करती होंगी? यदि वे कुछ सुनने के लिए आती तो कोई परवाह नहीं थी, लेकिन आती हैं वे दर्शन करने के लिए और दर्शन कर नहीं सकतीं। जिन आँखों में लज्जा है, वे क्या देख सकेंगी? ऐसी लज्जा क्यों होनी चाहिए? लज्जा तो पाप की होती है। ऐसी हालत में स्त्रियाँ बाहर आयें और वे काम करें, जो मैंने बताये हैं। वे समाज के दूसरे नये कामों में भी हिस्सा बँटा सकती हैं। यह बहुत कठिन काम है। जब सामने कठिन काम आता है, तब उत्साह आना चाहिए। हमारा जन्म कठिन काम करने के लिए, पुरुषार्थ करने के लिए हुआ है, यह आप अच्छी तरह समझ लें।

हिन्दुस्तान में स्त्री-शक्ति कैसे आगे आये, इसके लिए मेरा चिन्तन चल रहा था। इसी बीच शान्ति-सेना एवं सर्वोदय-पात्र का काम सामने आया। वही स्त्रियों के लिए बहुत बड़ा कार्यक्रम बन गया है। सर्वोदय-पात्र का काम तो स्त्रियाँ पूर्ण रूप से कर ही सकती हैं। सर्वोदय-पात्र के बारे में लोगों का खयाल है कि उसका बराबर जारी रहना कठिन है। लेकिन मेरा मानना है कि स्त्रियाँ इस काम को अपने हाथों में ले लें तो वह कभी बन्द नहीं हो सकता। स्त्रियों में चिपके रहने की एक जबरदस्त शक्ति है। एकबार वे इस योजना से परिचित हो जायँ तो फिर छोड़ेंगी नहीं।

स्त्रियाँ और सत्याग्रह

हमारी माँ के पास एक देवी की मूर्ति थी। वह उसकी प्रति-दिन पूजा करती थी। माँ के देहावसान के बाद उस मूर्ति को मैंने अपने पास रखा। लेकिन बाद में मैंने उसे काशीबा को दे दिया। यह '१८ की बात है। अब '५८ खत्म हुआ है। बीच के इन चालीस वर्षों से काशीबा बराबर उस प्रतिमा की पूजा कर रही हैं। इतने दिनों में कितना फेर-बदल हुआ होगा? बीमारी आती है, आप-त्तियाँ आती हैं और तरह-तरह के प्रसंग आते हैं, फिर भी सभी कुछ झेलते हुए इतने वर्षों से बिना किसी नागा के उस देवी-मूर्ति की पूजा करते रहना स्त्रियों का ही काम है। यह शक्ति उन्हीं में है। संस्कृत में 'धृति' शब्द है, जिसका अर्थ है—धारण कर लिया। स्त्रियों में धृति होती है।

इन दिनों एक शब्द चल रहा है—'सत्याग्रह'। अपने शास्त्रों में 'सत्य' और 'धृति' याने सत्य से चिपके रहने की बात है। कठोपनिषद् में एक कहानी है। नचिकेता यमराज से आत्मज्ञान की माँग कर रहा है। इसपर यमराज उसे प्रलोभन दे रहा है कि तुम यह लो, वह लो। लेकिन वह दूसरी सब चीजों को लेने से इन्कार कर देता है। नचिकेता को अपनी बात पर दृढ़ देखकर यमराज ने प्रसन्न होकर कहा कि 'यां त्वमापः सत्यधृतिर्बतासि।' तू सत्य को पकड़ रखनेवाला है। सत्य और धृति शब्द के स्थान पर आज सत्याग्रह शब्द चल रहा है। सत्याग्रह शब्द कुछ कमजोर है। एक हद से आगे बढ़ने पर यह शब्द इतना निर्दोष नहीं है, जितना कि धृति शब्द है। इसलिए 'सत्याग्रह' के स्थान पर हम 'सत्यधृति' शब्द का उपयोग कर सकते हैं। सत्य को पकड़े रखना स्त्रियों का धर्म है। इस गुण के कारण वे सर्वोदय-पात्र का काम उठा सकती है।

शान्ति-सेना का काम भी स्त्रियों के लिए बहुत आसान है। जहाँ दो पक्ष लड़ते हों, वहाँ शान्ति की मूर्ति कोई महिला आकर खड़ी हो जाय तो बस, झगड़ा खत्म ही समझिये। झगड़े की परिस्थिति में स्त्रियाँ उसे रोकने की हिम्मत करें, यही मेरी माँग है। शान्ति-सेना के लिए आदेश होने पर कहीं भी अन्यत्र जाना स्त्रियों के लिए संभव न हो, तब भी कोई हर्ज नहीं है। वे अपने-अपने स्थानों पर रहकर भी शान्ति का काम कर सकती हैं।

स्विट्जरलैण्ड में स्त्रियों को वोटिंग का अधिकार नहीं है और वे वोट देने का हक चाहती भी नहीं हैं। आखिर इसका क्या कारण है? पुरुषों की चोटियाँ स्त्रियों के हाथ में रहें तो उन्हें इलेक्शन के पीछे दौड़ने की क्या आवश्यकता है? माताओं के हाथों में बच्चे होते हैं। वे जानती हैं कि बच्चों के झगड़े में पड़कर क्या करना है? यह कहकर मैं आपके हाथों से वोट का हक छीनना नहीं चाहता, पर मैं आपको यह सुझा रहा हूँ कि आपको अधिकारों की छीना-झपटी में पड़ने की कोई जरूरत नहीं है। अगर स्त्रियाँ पुरुषों की बराबरी करने के चक्कर में न पड़ें तो वे उनको नियन्त्रण में रख सकती हैं और निष्पक्ष भूमिका रखने में सहायक हो सकती हैं।

महिलाएँ और बापू का सपना

लोकतन्त्र में विरोधी पक्ष आवश्यक माना जाता है, ताकि वह सत्ताप्राप्त पक्ष को अनियंत्रित होने से रोक सके। मैं भी मानता हूँ कि सत्तारूढ़ पक्ष को अच्छे कामों में मदद देने, हिम्मत बँधाने और गलत कार्यों से रोकने के लिए दूसरे पक्ष की जरूरत होती है। परन्तु जब दोनों पक्ष सत्ताभिलाषी हों, सत्ता के आस-पास ही दोनों का नृत्य चल रहा हो तो वे एक-दूसरे

को ठोक करने की बजाय एक-दूसरे के गुणों को ही चूस लेते हैं। इसलिए प्रजातन्त्र की पूर्ण शुद्धि सत्ताभिलाषी विरोधी पक्ष से नहीं हो सकती। उसके लिए तो तीसरे ही पक्ष की जरूरत होगी, जो तटस्थ रहकर रचनात्मक दृष्टि से टीका करने के साथ-साथ निष्पक्ष भाव से सेवा करता रहे। बापू ऐसा ही पक्षमुक्त समाज बनाना चाहते थे। उनकी यह प्रबल इच्छा थी कि कांग्रेस का रूपान्तर लोक-सेवक-संघ में हो जाय और वह इलेक्शन से दूर रहकर सभी पक्षों पर असर डालने में सक्षम बने, लेकिन वैसा न हो सका। क्यों न हो सका? अभी मैं इसके कारणों में नहीं जाना चाहता। अभी तो मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि अब वह जिम्मेवारी आप लोग उठाकर बापू के लोक-सेवक-संघ के सपने को साकार बनायें।

जब कभी मैं सरकारी कर्मचारियों, राजनैतिक पक्षवालों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं से मिलता हूँ तो उनसे यही कहता हूँ कि 'तुम भले ही पक्षों में पड़े रहो, मैं तुमको कुछ भी नहीं कहना चाहता, लेकिन तुम अपनी माताओं, स्त्रियों, बहनों तथा लड़कियों को मेरे हाथों में सौंप दो। उनकी शक्ति मेरे लिए बस है। फिर वे ही अपने बच्चों, पतियों, भाइयों और पिताओं को गलत कामों से रोक सकती हैं।' इससे आप समझ सकती हैं कि मैंने स्त्रियों से कितनी अपेक्षाएँ रखी हैं। इसलिए अब समाज में अशान्ति न हो, क्षोभ न हो, शोक न हो यानी समता, करुणा और शान्ति बनी रहे, इसके लिए आपको जिम्मेवारी उठानी होगी।

विज्ञान के युग में अब जितने भी सवाल उठते हैं, उनका समाधान भी क्षोभरहित चित्त से ही होना चाहिए। इसीलिए मैंने स्थितप्रज्ञ के लक्षणों की इस जमाने के लिए अनिवार्य आवश्यकता मानी है। इस जमाने में छोटे-से-छोटे मसले फौरन विश्वरूप ले लेते हैं, अतः उन मसलों का फैसला तत्काल करना पड़ता है। इस स्थिति में अस्थितप्रज्ञ होने से कैसे चल सकेगा? मसले जितने बड़े होते हैं, उनका निर्णय उतना ही जल्दी करना होता है। इन दिनों जिनके पास निर्णायक बुद्धि होगी, वे ही तारण करने में समर्थ होंगे। यह काम स्त्रियाँ कर सकती हैं। वे स्वाभाविक तौर से मातृस्थान हैं। उनके चित्त में सबके लिए समत्व, ममत्व, प्रेम और करुणा है, इसलिए उनकी प्रज्ञा में स्थिरता और तटस्थ भूमिका रहनी चाहिए। यदि बहनें इस स्थिति में आ जायँ तो निःसंदेह उनका असर कुल-के-कुल पक्षों पर होगा।

बहनें ब्रह्मविद्या प्राप्त करें

भूगोल, राजनीति, गणित आदि विद्याओं में पुरुष पारंगत होना चाहें तो हों, लेकिन आप सब बहनों को ब्रह्मविद्या प्राप्त करनी चाहिए। मैंने कस्तूरबा ट्रस्ट की बहनों का भी ध्यान इसी ओर आकृष्ट किया है। मैंने उन बहनों को कहा था कि तुम उनको तालीम देती हो, परन्तु ब्रह्मविद्या के अभाव में तुम्हारी इस तालीम का कोई उपयोग नहीं होगा। बीस-बाईस वर्षों की अकेली जवान लड़की प्रतिकूल परिस्थितियों में जब देहातों में काम करेगी, तब आध्यात्मिक शक्ति के बिना कैसे टिक सकेगी? अभी मैं चित्तौड़ से आ रहा हूँ। वहाँ मुझे मीरा का दर्शन हुआ था। उसमें कितना त्याग और कितना साहस था! अपने जमाने की सारी मर्यादाएँ तोड़कर वह बाहर आयी थी। उसने जो बहादुरी दिखायी, वह भारत के इतिहास में अद्भुत है। जहाँ राजस्थान में आज भी परदे का रिवाज है, वहाँ मीरा पर्दा तोड़कर नाच उठती है—'पद घुँघरु बाँध मीरा नाची रे। लोग कहे मीरा भयी बावरी न्यात कहे कुलनासी रे।' लोग उसे पागल कहते हैं, कुल का विनाश करनेवाली कहते हैं, फिर भी वह किसीकी परवाह नहीं करती। आखिर यह हिम्मत उसमें कहाँसे आयी? मीरा की शादी की बात चली तो उसने कहा कि मैं तो श्री गोपाल के चरणों की दासी हूँ। फिर भी मीरा की शादी कर दी गयी तो उसने अपने पति का भी ऐसा जीवन-परिवर्तन किया कि वह पति न रहकर भक्त बन गया। मीरा जैसी ही हालत रामकृष्ण की भी थी। पहले रामकृष्ण पागल माने जाते। उन्होंने अपनी पत्नी की देवी समझकर पूजा की। मूर्ति के सामने बैठकर जैसे गन्ध, फूल, आरती से पूजन किया जाता है, वैसे ही उन्होंने किया तो उनकी पत्नी का भी परिवर्तन हो गया। मैं यह कहना चाहता हूँ कि रामकृष्ण और मीरा में जो ताकत थी, वह ब्रह्मविद्या की थी। स्त्रियों को इसी ब्रह्मविद्या की अत्यन्त आवश्यकता है। हृदय में चाह हो, लगन हो, तड़पन हो तो ब्रह्मविद्या की 'इच्छा मात्रेण' प्राप्ति होती है। मैं चाहता हूँ कि आप सबके हृदय में इसकी प्राप्ति के लिए आकांक्षाएँ उत्पन्न हों। ●●●

प्रार्थना-प्रवचन

किशनगढ़ (राज०) ३-३-'५९

हम लोग ग्रामेश्वर की स्थापना के लिए ही घूम रहे हैं

अजमेर यहाँसे थोड़ी दूर पर बसा हुआ है। यहाँ भी सर्वोदय-सम्मेलन हुआ था। आप लोगों में से बहुत लोग यहाँ सम्मेलन देखने के लिए गये होंगे। जो नहीं भी गये होंगे, उन लोगों ने कम-से-कम सम्मेलन के बारे में सुना अवश्य होगा। उस सम्मेलन में भाग लेने के लिए हिन्दुस्तान के लगभग सभी प्रान्तों के लोग आये थे। तीन दिनों तक उन सबने वहाँ सामूहिक चर्चाएँ कीं। भारत के अधिकांश लोग देहातों में रहते हैं—उनकी ताकत कैसे बढ़ायी जाय? समस्त लोग मिल-जुलकर काम करें, उसके लिए क्या योजना की जाय? सबको विकास का अवसर किस भाँति उपलब्ध हो, यही इस चर्चा का मुख्य विषय था।

सबके विकास को ही सर्वोदय कहते हैं। सर्वोदय याने सबका भला। एक का भला हो और दूसरे का न हो, यह बात सर्वोदय में नहीं हो सकती। सर्वोदयी कार्यकर्ताओं ने चर्चाओं के बाद यह निर्णय किया कि लोक-शक्ति जागृत करने के लिए एक सेवक-समाज तैयार करना चाहिए। पाँच हजार मनुष्यों की सेवा के लिए कम-से-कम एक सेवक चाहिए। वैसे सेवा करनेवाले लोगों का एक समाज बने। उस समाज को जनता की सम्पत्ति मिले। सम्पत्ति के लिए घर-घर में सर्वोदय-पात्र रखे जायँ।

राजस्थान के अन्तर्गत डुँगरपुर, बाँसवाडा, उदयपुर आदि जिलों में घूमते हुए हम अजमेर पहुँचे। भीलवाड़ा में कुल-के-कुल घरों में सर्वोदय-पात्र रखे गये हैं। सर्वोदय-पात्र लेकर ही लोग हमारा स्वागत करते थे। वहाँकी बहनें सर्वोदय-पात्र लेकर हमारे सामने आती थीं और कहती थीं कि हमने इसकी स्थापना की है। वह दृश्य यहाँपर नजर नहीं आ रहा है। क्या वह चीज आप लोगों के पास नहीं पहुँची है? (इतने में बताया गया कि यहाँपर दो शांति-सैनिक बने और पन्द्रह सर्वोदय-पात्र स्थापित किये गये हैं) यानी यहाँपर हमारा विचार आ गया है।

विचार-प्रचार के दो तरीके

विचार-प्रचार को मैं बहुत महत्त्व देता हूँ। विचार-प्रचार करने के दो तरीके हैं। पहला तरीका घर-घर में जाकर विचार समझाने तथा शांति-सैनिक तैयार करने का है और दूसरा तरीका समस्त गाँववालों को एकत्र करके ग्राम-संकल्प करनेवाने का है। हमारा यह विचार घर-घर पहुँच जाना चाहिए। हम एक अप्रैल को पंजाब में प्रवेश करेंगे। आज ३ फरवरी है। अभी २८ दिन और हम राजस्थान में हैं। क्या आप इतने ही दिन विचार-प्रचार का काम करेंगे या सतत करते रहेंगे? सतत विचार-प्रचार के लिए पर्याप्त शांति-सैनिक और सर्वोदय-पात्र चाहिए।

सरकार भाग्यविधाता नहीं

अजमेर-सम्मेलन के बाद कल हम गगवाना आये। हमारे साथ ९॥ मील की पदयात्रा करते हुए करीब ८७० शान्ति-सैनिक आये। उन्होंने भी शांति-सेना के कार्य-विस्तार की चर्चा की और यह प्रतिज्ञा की कि शांति के लिए हम लोग मर मिटेंगे। भारत के कोने-कोने से आये हुए ८७० लोगों का प्रतिज्ञा लेने के लिए इस प्रकार एकत्र होना बहुत ही अद्‌भुत, अलौकिक एवं रमणीय था। मुझपर उस दृश्य का बहुत असर हुआ है। मैंने उससे शक्ति पायी है। अब वे शान्ति-सैनिक अपने-अपने गाँवों में जाकर लोगों को समझायेंगे कि भाइयो, आपका भाग्य आप ही के हाथों में है। सरकार आपकी भाग्यविधाता नहीं हो सकती। आप ही सरकार के स्रष्टा हैं। राजा-महाराजा की सत्ता अब नहीं रही है। इन दिनों जो शासन करते हैं, उनका चुनाव आप ही करते हैं। तीन साल के बाद चुनाव होनेवाला है। जिन लोगों को आप ठीक समझेंगे, उन्हींको चुनेंगे। राज्य चलानेवाले आप ही हैं। जिनको आप चुनते हैं, वे आपके सेवक हैं। इसलिए गाँव-गाँव की ताकत बढ़ाओ, ग्राम-स्वराज्य का नमूना पेश करो।

आज गाँवों में ऊँच-नीच के भेद हैं, कोई जमीनवाला है तो कोई बे-जमीन है। कोई मालिक है तो कोई मजदूर है। कोई सुखी है और कोई दुःखी है। सुखी दुःखियों की परवाह नहीं करते। दुःखी सुखियों से डरते हैं। अगर यही स्थिति बहुत दिनों तक कायम रही तो आपको जो अधिकार मिला है, उसका क्या उपयोग होगा? ग्राम-स्वराज्य कायम करके ही आप उस अधिकार का उपयोग कर सकते हैं।

राजस्थान में पानी के चश्मे कम हैं। बहता हुआ पानी कहाँ दिखायी पड़ता है? पानी के स्रोत न होने से जमी सूख जाती है, वैसे ही करुणा का स्रोत न होने से सारा जीवन सूख जाता है। आपके यहाँकी रेतीली जमीन में खूब करुणा छिपी हुई है। इसलिए करुणा का स्रोत फूट निकलना चाहिए। इसके लिए 'भाखरा डैम' की योजना करने की आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर ने उसके लिए एक डैम की योजना कर दी है, वह है अपना दिल! आप अपने दिल को उदार बनाइये, भक्ति-भावना को बाहर आने दीजिये। आपके यहाँ बहुत बड़े-बड़े भक्त हुए हैं।

राजस्थान में भक्ति-भावना है, पराक्रम है और व्यवस्था-शक्ति है। पराक्रम के क्षेत्र में अनेकों नाम गिनाये जा सकते हैं, वैसे ही यहाँके लोग भारत के दूर-दूर के जंगलों में जाकर सम्पत्ति एकत्र करके जो व्यवस्था-शक्ति दिखलाते हैं, वह प्रसिद्ध है। यहाँकी व्यवस्था-शक्ति, भक्ति और पराक्रम के अधिष्ठान पर ग्रामदानमूलक ग्राम-स्वराज्य की रचना होनी चाहिए।

सबका हृदय करुणा से परिप्लावित हो, सभी एक-दूसरे पर प्यार करें, एक-दूसरे को सहयोग करें तो राष्ट्र की शक्ति बढ़ सकती है। आपके दो हाथ और मेरे दो हाथ मिलकर चार हाथ हो जायँ। इस प्रकार एक-दूसरे के हाथ मिलने से हाथों की संख्या बढ़ेगी। पाँच सौ लोगों के हाथ मिलने से एक हजार हाथवाला विराट परमेश्वर प्रकट होगा। लेकिन आज क्या हो रहा है? हजार जनसंख्यावाले गाँव में दो हजार हाथ हैं। वे हाथ एक-दूसरे के विरुद्ध काम करते हैं तो परमेश्वर का रूप कैसे प्रकट हो सकता है? हम सब मिलकर एक परमेश्वर बनायें, ग्रामेश्वर बनायें। किसी देवता को चार हाथ होते हैं तो किसीको आठ, किसी-किसीको सोलह हाथ भी होते हैं। गीता के सोलहवें अध्याय में बताया गया है कि ईश्वर के हजारों मुँह और हजारों हाथ हैं। सभी गाँववाले मिलकर ग्रामेश्वर के हजारों हाथों को प्रकट करें तो कितना आनन्द आयेगा!

भगवान : मन्दिर के कैदी

जो रामेश्वर की यात्रा के लिए जाते हैं, काशी जाते हैं और जगन्नाथपुरी भी जाते हैं। अपना गाँव छोड़कर हजारों मील दूर मन्दिरों में भगवान के दर्शन के लिए जाते हैं। क्या भगवान मन्दिरों में कैद हैं? जेलों में हम अपने भाइयों से मिलने के लिए जाते हैं, वैसी ही यह स्थिति है। कई-कई मन्दिरों की व्यवस्था जेलों जैसी ही होती है। बिहार में लोग हमें एक जैन-मन्दिर में ले गये थे। उस मन्दिर का बाहर का जो दरवाजा था, वह ठीक नागपुर की जेल जैसा था। दरवाजे पर ताला लगा था और वहाँ बन्दूक लेकर एक सन्तरी खड़ा था। जब हम लोग निकट पहुँचे तो वह ताला खोला गया। हम लोग मन्दिर में प्रविष्ट हुए। अन्दर दरवाजे में एक और दरवाजा था। उसे भी पार किया तो देखा कि सामने महावीर स्वामी की एक नग्न मूर्ति है। उपाधिरहित उस महापुरुष को चार कोटों के अन्दर सन्तरी की चौकीदारी में बन्द देखकर हमें कैसा लगा होगा? इसकी जरा कल्पना तो कीजिये। खैर, हम लौटे तो हमारे पीछे एक-एक दरवाजा बन्द होता गया। अन्त में फिर उसी बन्दूकधारी का दर्शन हुआ। मन्दिर में सोने का सरंजाम था, माया का बाजार! उसीकी सुरक्षा के लिए सन्तरी खड़ा किया था।

माया के कारण महावीर भी मन्दिर के अन्दर कैद हो गये! कहाँ रहा भगवान? क्या भगवान गाँवों में नहीं होता है? वह तो घट-घट में होता है। इसलिए घट-घटवासी भगवान को हम पहचानें! इन्सानों के अन्दर रहनेवाले भगवान को हम पहचानें। इन्सानों के अन्दर रहनेवाले भगवान को देखें। जब तक हमारे हाथ एक-दूसरे के सहयोगी नहीं बनेंगे, तब तक इन हाथों में शैतान निवास करता रहेगा। शैतान के रहने से ये हाथ एक-दूसरे की काटने की कोशिश करते हैं। इन हाथों से सेवा भी हो सकती है और किसीका गला भी दबाया जा सकता है। ये हाथ किसीको पानी में डुबो सकते हैं और किसीको निकाल भी सकते हैं, सत्कार्य कर सकते हैं और असत्कार्य भी कर सकते हैं। असत्कार्यों में लगे रहनेवाले हाथ शैतान के होते हैं और सत्कार्यों में प्रवृत्त हाथ परमेश्वर के होते हैं। सत्कार्यों में प्रवृत्त अनेकों हाथों के एकत्र होने से ग्रामेश्वर के दर्शन होंगे। परमेश्वर की, याने स्वयंभू महादेव की स्थापना करने के लिए ही हम घूम रहे हैं। रामचन्द्रजी रावण से युद्ध करने के लिए लंका गये तो रास्ते में

समुद्र पड़ा। वहाँ उन्होंने रामेश्वर की स्थापना की थी। रामेश्वर की स्थापना तो हो गयी, अब हम ग्रामेश्वर की स्थापना करना चाहते हैं। इसके लिए आपका सहयोग अपेक्षित है।

पड़दा सभ्यता के खिलाफ है

आपके यहाँ घूँघट की प्रथा है। बहनें लज्जा के कारण घूँघट निकालती हैं। ये आँखें अखिल सृष्टि में व्याप्त भगवान का रूप देखने के लिए मिली हैं। फिर इसमें लज्जा की क्या बात है? यहाँपर पहले मुसलमानों का राज्य था। वे लोग अरबस्तान से यहाँ आये। अरब में परदे का रिवाज था, वही रिवाज उन्होंने अपने देश में चलाया। फिर राजपूतों का राज हुआ। तब राजपूतों ने भी उन्हींका अनुकरण किया। राजपूत राजा बादशाह को प्रसन्न रखने के लिए उन्हींके पीछे-पीछे चलने में अपने को सुरक्षित समझते थे। जैसे अंग्रेजों के शासन-काल में हमारे लोग गरमी में भी सूट-बूट पहनकर फिरते थे, कालर में टाई फाँसा करते थे और पसीने से तर-बतर होने से कपड़े धोबी से धुलवा लेते थे। यद्यपि यह पद्धति आज भी विद्यमान है, फिर भी सच यह है कि हमने यह पहनाव अंग्रेजों की खुशामद करने के लिए स्वीकार किया था, वैसे ही परदे की प्रथा भी बादशाहों को खुश रखने के लिए शुरू की गयी है। स्त्री-पुरुषों को भगवान की भक्ति में एकत्र होना चाहिए। खेतों में साथ-साथ काम करना चाहिए। एक-दूसरे की मर्यादा रखनी चाहिए। इसमें लज्जा की कोई बात नहीं है। सब बहनें लज्जा छोड़कर राष्ट्र-निर्माण के काम में योग दें।

शिक्षक राष्ट्र-निर्माता हैं

राष्ट्र को बनानेवाली एक तो माताएँ होती हैं और दूसरे होते हैं—शिक्षक। शिक्षकों से मैं अधिक क्या कहूँ? वे तो मेरी ही जाति के हैं। बचपन से मैं सिखाता आया हूँ और सीखते भी आया हूँ। मेरा सीखने का काम आज भी चालू है। इसलिए मैं शिक्षकों से आग्रहपूर्वक कहना चाहता हूँ कि अभी अपने देश में यह जो नया विचार आया है, उस विचार के सम्बन्ध में आप अध्ययन, चिन्तन, मनन एवं अनुशीलन कीजिये। गीता-प्रवचन, ग्राम-स्वराज्य, जय जगत, सर्वोदय-पात्र जैसी पुस्तकें आपके अध्ययन के लिए उपयोगी हैं। आप लोग देहातों में रहते हैं। भारत के देहातों की जनता अशिक्षित है। विशेष करके राजस्थान का ग्राम्य-जीवन तो बहुत ही पिछड़ा हुआ है। इसलिए आपका कर्तव्य है कि आप कुछ पुस्तकें अपने पास रखें और सद्विचार-प्रचारार्थ गाँव-गाँव में जायँ। इससे लोक-शिक्षण का महत्त्वपूर्ण कार्य हो सकेगा।

आज शिक्षकों की क्या हालत है? उन्हें लोग कितनी इज्जत देते हैं? सभी समझते हैं कि ये बच्चों को पढ़ानेवाले सरकारी नौकर हैं। लेकिन अगर आप लोगों में जाकर सद्विचार-प्रचार का कार्य करेंगे तो लोक-शिक्षक की हैसियत आयेगी।

देहात में काम करने के लिए छोटे-छोटे शिक्षकों का उपयोग हो सकता है। जहाँ बड़े-बड़े व्यापारी नहीं होते, वहाँ छोटे-छोटे व्यपारियों का उपयोग होता है। देहातों में अगाध पाण्डित्य की आवश्यकता नहीं है। अपढ़ जनता के सम्मुख छोटे-छोटे शिक्षक ही विद्वान हैं। वहाँ सेवा का काम कर सकते हैं।

शिक्षकों की हालत देखकर आजकल दया ही आती है। उन्हें वेतन कम मिलता है और इज्जत भी कम मिलती है। लोगों की ओर से उनके प्रति जो उपेक्षा बरती जाती है, उसे कुछ ही परिश्रम करके अब वे स्वयं तोड़ सकते हैं। बच्चों के शिक्षण के साथ-साथ जब सेवा के जरिये उनका सम्बन्ध लोक-जीवन से आयेगा तो अवश्य ही स्थिति बदल जायगी। इस काम में सर्वोदय-पात्र का कार्यक्रम भी उपयोगी हो सकता है। वे इस काम को उठा लें।

अभी हमने अन्त में ये थोड़े-से विचार शिक्षक भाइयों को लक्ष करके रखे हैं। इन शिक्षक भाइयों को हमें बिना पूछे ही दोपहर में ११ से १२ बजे का समय दे दिया गया था। उस समय अन्य कार्यक्रमवश हम इनसे नहीं मिल सके। इसलिए इसी समय हमें जो कहना था, वह कह दिया है। अब आप सभी लोग हिल-मिलकर गाँव के विकास की योजना बनाइये।

मुक्ति को आजकल हम स्वावलम्बन कहते हैं। उस स्वावलम्बन के भी तीन अर्थ हैं!

अपने उदर-निर्वाह के लिए दूसरों पर आधार न रखना पड़े, यह उसका पहला अर्थ है।

दूसरा अर्थ है, ज्ञान-प्राप्ति के लिए स्वतन्त्र शक्ति निर्माण हो।

मनुष्य को अपने आपपर काबू रखने की शक्ति प्राप्ति हो, यह स्वावलम्बन का तीसरा अर्थ है।

शरीर की पराधीनता गलत है।
मन की पराधीनता गलत है।
बुद्धि की भी पराधीनता गलत है।

इसलिए अन्य सारे आलंबनों से, अन्य सारे आधारों से मुक्ति को ही स्वावलम्बन कहा जा सकता है। ● ● ●

अनुक्रम

१. गृहस्थाश्रम ब्रह्मचर्य की साधना में बाधक नहीं....
हटुंडी २६ फरवरी '५९ पृ० २४५
२. उदारता का प्रतिनिधित्व करनेवाली....
पर्वतसर ६ मार्च ,, ,, २४६
३. लोक-सेवक-संघ का सपना साकार करने की....
सर्वोदयनगर २८ फरवरी ,, ,, २४८
४. हम लोग ग्रामेश्वर की स्थापना के लिए ही घूम रहे हैं....
किसनगढ़ ३ मार्च ,, ,, २५०

● ● ●

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित
फोन : १२८५ तार—प्रकाशन, राजघाट, काशी।